सल्तनत काल में हिन्दुओं की स्थितिः एक मूल्यांकन

डा0 सुनिल कुमार
पूर्व शोध छात्र (इतिहास विभाग)
बी0आर0ए0बी0यू0 मुजफ्फरपुर

भूमिकाः 13वीं शताब्दी में मुस्लिम आक्रमणकारी द्वारा उत्तरी भारत की विजय भारतीय इतिहास का एक युग–परिवर्तन विन्दु है। धर्मान्ध मुस्लमानों ने हिन्दुओं को मुस्लमान बनाने का अभियान दमन एवं विजय की प्रक्रिया से आरंभ किया, किन्तु बहुसंख्यक भारतीय हिन्दू समाज इस आक्रामक मलेच्छ धर्म को अंगीकार करने को तैयार नहीं था। धीरे–धीरे परिवर्तित परिस्थितियों और आवश्यकताओं ने हिन्दू समाज, उसकी परंपराओं व नियमों संशोधन व लचीलेपन की आवश्यकता को अनिवार्य बना दिया। आडंबरपूर्ण रीति–रिवाज व दूसरे वर्गों को आत्मसात करने की क्षमता रखने वाली हिन्दू जाति के साथ इस्लाम की कोई समता नहीं थी। परंतु इस्लाम की सुस्पष्ट सामाजिक प्रथा, दर्शन और कट्टर धर्म नियमों ने हिन्दू धर्म में इसके विलय को असंभव बना दिया था।

सल्तनत काल में धर्म और सामाजिक संस्थाओं के मामले में हिन्दू और मुस्लमानों में बहुत भेद था। इनके धार्मिक मतभेदों के विषय में यू0एन0 घोषाल ने हिस्ट्री एंड कल्चर ऑफ इंडियन पिपुल में कहा कि वे अपनी धार्मिक आस्था, पूजा–अर्चना तथा ईश्वर की भक्ति से संबंधित दैनिक व्यवहारों में मौलिक भेद रखते है। इस्लाम धर्मावलम्बियों में बराबरी तथा भाईचारे के सिद्धांत के साथ हिन्दुओं में प्रचलित जाति प्रथा और छुआछुत में भारी विषमता परिलक्षित होती थी। हिन्दुओं में अंतर्विवाह, सहभोज और विधवा विवाह के निषेध को मुस्लमान गलत मानते थे, क्योंकि इस्लाम में तलाक शुदा औरतों के पुनर्विवाह तथा कुछ प्रतिबंधों के अलावा विवाह की पूर्ण स्वतंत्रता थी। उनमें उत्तराधिकार के नियमों, मृतकों के संस्कार, पोशाक, भोजन तथा स्वागत करने के ढ़ंग भी अलग–अलग थे। अतः मुस्लिम विजेताओं ने भारत में ऐसी समस्याएं पैदा कर दी जो पहले नहीं थी।[1] सल्तनतकालीन हिन्दुओं की स्थिति पर प्रकाश डालने वाले विविध क्षेत्रीय ग्रंथ प्रमाणित श्रोतों के रूप में उपलब्ध है। इन ग्रंथों में मिथिला स्कूल के प्रमुख प्रामाणिक ग्रंथ चंदेश्वरकृत 'विवाद चिंतामणि' वाचस्पति मिश्र की 'स्मृति' एवं मिसारू मिश्राकृत 'विवाद चन्द्र स्मृति' प्रमुख है।

हिन्दू समाज का सामाजिक विभाजनः सल्तनत हिन्दू समाज को हम मुख्यतः चार भागों में विभाजित कर सकते है–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र। ब्राह्मण लोग अध्ययन–अध्यापन का कार्य करते थे। क्षत्रिय वर्ग सेना का उत्तरदायित्व निभाता था। वैश्य वर्ग साहूकारी, लेन–देन संबंधी कार्य कर अपना जीविकोपार्जन करता था। शुद्र वर्ग की समाज में निम्नतर अवस्था थी। शुद्र वर्ग का कार्य उपर्युक्त वर्गों का सेवा करना था। इन चार वर्णों के अतिरिक्त हिन्दू समाज में विविध छोटी–मोटी जातियों की बहुलता थी। जाति प्रथा अपनी प्रभावशाली स्थिति में थी व इस कहावत को चरितार्थ करती थी– 'ज्यों दरखत के पात, पात में पात, त्यों हिन्दू की जात, जात में जात'।[2] सल्तनत काल के प्रारंभ में ब्राह्मणों का स्थान अत्यन्त सम्मानजनक था।

ए0एल0 श्रीवास्तव सल्तनत युग के मुस्लिम शासन का पहला गंभीर प्रभाव ब्राह्मणों की स्थिति व उनके कार्यों पर मानते है। वे लिखते है कि 'अब ब्राह्मण अपने विद्यानुराग से प्रर्याप्त नहीं कमा पाते थे, इसलिये नवीन स्मृतियों में यह व्यवस्था कर दी गयी कि वे श्रमिक लगा कर खेती–बाड़ी कर सकते है। विशेष कठिनाई के समय स्वयं भी हल जोत सकते है। आगे इस बात को और स्पष्ट कर दिया गया कि सभी जातियों के लोग खेती–बाड़ी कर सकते है।[3] स्मृतियों के इन नवीन भाष्यों में उन्हें उसकी अनुमति प्रदान कर दी गयी की वे अपने मुल व्यवसाय की ओर कम ध्यान दे सकते थे। उन्हें अनुमति थी कि वे वेदों के उन्हीं भागों का अध्ययन कर सकते थे जिनमें उन्हें रूचि हो। कहीं–कहीं तो पुराणों का अध्ययन ही काफी बताया गया है।[4] इस प्रकार सल्तनत काल में ब्राह्मणों के घटते हुए महत्व और वेदाध्ययन के प्रति विमुखता को स्पष्टतः स्वीकार कर लिया गया। मुस्लमानी शासन का दूसरा प्रभाव यह हुआ कि शुद्रों के प्रति ब्रह्मणों का दृष्टिकोण बदल गया। अब यह कहा जाने लगा कि शुद्र पुराण का पाठ सुन सकते है और ब्रह्मण कुछ खास–खास शुद्र जातियों का आहार भी ग्रहण कर सकते है और शुद्र लोग कुछ वर्जित वस्तुओं का व्यापार भी कर सकते है।

क्षत्रियों का दायित्व राज्य की सुरक्षा और सैन्य संबंधी उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना था। हिन्दू राज्यों की समाप्ति पर वे सुल्तान की सेना में भर्ती होने लगे थे। सैनिक जीवन ही उसका व्यवसाय बन गया। वैश्यों का मुख्य कार्य व्यवसाय तथा पैसों का लेन–देन था। उनके व्यापारिक लाभ का प्रयोग हिन्दू शासक धार्मिक संस्कारों और समारोहों में करते थे। हिन्दू समाज की सुरक्षार्थ भी वैश्यों द्वारा अर्जित धन का उपयोग किया जाता था। हबीबुल्ला ने सल्तनतकालीन वैश्यों के विशिष्ट व्यवसायों पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि वैश्यों का मुद्रा के लेन–देन का धंधा सर्वोत्तम एवं लाभवर्द्धक था, परंतु यह धंधा पूर्णतः हिन्दुओं तक ही सीमित था। हिन्दू बोहरों की बढ़ती ब्याज दर को राजकीय शक्ति का आश्रय प्राप्त था। इसके बलबूते पर वैश्यों ने सामंतों को भी गरीब बना दिया था।[5] हिन्दू समाज के चौथे वर्ग का कार्य अन्य तीनों वर्गों की सेवा करना था। शुद्रों को समाज घृणा एवं तिरस्कारपूर्ण दृष्टि से देखा जाता था। कायस्थ जाति के लोग 11वीं सदी एवं उसके बाद के सदियों में विभिन्न प्रदेशों में उच्चतम प्रशासकीय पदों रहे, किन्तु सल्तनत काल की स्थापना ज्यों–ज्यों दृढ़ होती गयी त्यों–त्यों कायस्थों एवं अन्य हिन्दू जातियों के लोगों के प्रशासकीय पदों पर नियुक्ति करते समय बहुत सावधानी बरती जाने लगी।[11] निःसंदेह मुस्लिम शासन काल में हिन्दुओं को अत्यंत घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। अधिकांशतः हिन्दुओं को प्रशासन में उच्च पदों पर नियुक्त नहीं किया जाता था, नियुक्त किया भी जाता था तो उन्हें विश्वसनीय नहीं माना जाता था। उसकी कार्यकुशलता एवं ईमानदारी पर संदेह किया जाता था। तत्कालीन प्रशासक सामान्यतः समस्त असफलताओं और बुराईयों के लिए हिन्दू समाज को दोषी ठहराया जाता था। मोहम्मद तुगलककालीन सांकेतिक मुद्रा योजना, कृषि योजना आदि की असफलता के लिये मुस्लिम प्रशासक वर्ग ने हिन्दू अधिकारियों, कर्मचारियों व प्रजा को ही दोषी ठहराया था।

श्रीवास्तव का मत है कि इस युग में हिन्दू जनता को राजनीतिक तथा सामाजिक दृष्टि से बहुत दुख भोगने पड़े होंगे। उन्हें शासकों, मंत्रियों, प्रांतपतियों तथा सेनापतियों के महत्वपूर्ण पदों से न केवल वंचित किया गया बल्कि उनके साथ घृणा पूर्ण व्यवहार भी किया गया। तुर्की सुल्तान तथा उनके प्रमुख अनुयायी समृद्ध हिन्दू परिवारों से अपने लिये पत्नियां प्राप्त करने के इच्छुक रहते थे और इस हेतु उच्च सामंतों को अपनी लड़कियां देने पर विवश करते थे। मुस्लिम कानुन के अनुसार इन हिन्दू लड़कियों को पहले धर्म परिवर्तित कर के मुस्लमान बना लिया जाता था और तब उनके साथ विवाह किया जाता था। इन सब के कारण सम्मान–प्रिय हिन्दुओं को निरंतर अपमानित होना पड़ता था और इसलिये अपनी पराजय तथा पतन के कारण नहीं बल्कि वास्तव में वे यह विश्वास करने लगे कि हम नवागन्तुक संस्कृति, धर्म और जाति विशेषकर आचरण की शुद्धता, नैतिकता और रहन–सहन की दृष्टि से बहुत नीचे है।[7]

रीति–रिवाज एवं परंपरायेंः धार्मिक तीर्थ स्थानों पर धर्मानुमोदित आत्महत्या करने की हिन्दूओं की पुरानी प्रथा सल्तनत युग में भी कुछ सीमा तक बनी रही। तीर्थ स्थानों, पवित्र नदियों में डूबकर आत्महत्या कर लेना या, मंदिरों में अंग काटना या, नर बलि चढ़ाना पवित्र कार्य माना जाता था। इब्नबतुता के वर्णन से इस बात की पुष्टि होता है कि हिन्दू स्वेच्छा से गंगा में डूबकर आत्महत्या कर लिया करते थे।[8] हिन्दू समाज में अंधविश्वास, तंत्र–मंत्र, जादू–टोना, शकुन–अपशकुन, शुभ–अशुभ आदि प्रथाओं का बड़ा व्यापक प्रचलन था। हिन्दू समाज की बहुत सी कुरितियां मुस्लिम आक्रमण से पूर्व राजपूत शासनकाल में प्रवेश कर चुकी थी। तत्कालीन समाज में जाति प्रथा ने अपना व्यापक रूप धारण कर लिया था। मुस्लिम शासन के परिणामस्वरूप जाति प्रथा में जटिलता और बढ़ने लगी। तुर्क शासन ने हिन्दुओं को अपनी जाति संबंधी नियमों में पहले से भी अधिक जटिल बनाने के लिये बाध्य किया। तुर्कों को सुन्दर हिन्दू लड़कियों को अपनी पत्नियां बनाने का शौक था। इस कारण हिन्दुओं में बाल–विवाह का एक सामान्य नियम बन गया। यद्यपि सामान्यतः यह प्रथा अपनी जाति में ही विवाह करने की थी, लेकिन अंतरजातिय विवाह भी हो जाते थे।

राजाओं की प्रायः दो प्रकार की पत्नियॉ होती थी– एक तो विधिवत् ब्याही हुई रानी और दूसरी उप–पत्नियॉ। तलाक लेने की अनुमति नहीं थी तथा वैवाहिक संबंध मृत्यु से ही टुटता था।[9] दहेज एक विकट समस्या थी और बहुत से गरीब पिताओं को अपनी बेटी के विवाह में यथेष्ट दहेज देने के लिये सक्षम न होने के कारण नीचा देखना पड़ता था। महाराष्ट्र के महान संत तुकाराम को भी अपनी बेटी के विवाह के लिये गॉव के लोगों स`चंदा एकत्र करना पड़ा था। स्त्रियों की स्थिति प्राचीन भारत जैसी उच्च नहीं थी। किसी भी स्त्री को स्वतंत्र रहने नहीं दिया जाता था। कौमार्य अवस्था में वह अपने पिता के कठोर नियंत्रण में रहती थी, विवाह के पश्चात् पति के नियंत्रण में पति के मृत्यु के पश्चात् अपने युवा पुत्रों के।[10] सल्तनत काल में हिन्दू समाज में कन्याओं के विवाह की आयु 7 या 10 या अधिक से अधिक 12 वर्ष निर्धारित थी। कन्या के रजस्वल्ला होने की आयु तक या उसके पश्चात् होने वाले विवाहों को माता–पिता के लिए पाप माना जाता था। मध्य युग में भारत के

बाहर मुस्लिम देशों में पर्दा प्रथा नहीं थी। इसका प्रादुर्भाव उत्तरी भारत में 12वी सदी में यहॉ की प्रचलित विशेष सामाजिक परिस्थितियों के कारण हुआ। संभव है कि यह प्रथा राजपूती प्रभावों के कारण चल पड़ी हो। दक्षिणी भारतीय समाज, जहॉ मुस्लिम शासन का प्रभाव अधिक नहीं पड़ा, पर्दा प्रथा से मुक्त था। मध्य युग में बाल विवाह व प्रदा प्रथा दोनों के कारण कन्याओं को अलग रखा जाने लगा और स्त्रियों की दशा और खराब हो गयी।[11] सती होना अनिवार्य नहीं था लेकिन यह प्रथा सामान्यतः प्रचलित थी। अलबरूनी लिखता है कि विधवा की दो बातों में से एक को चुनना पड़ता था कि या तो वह आजीवन विधवा रह कर समाज से अपमानित होती रहे या, मृत पति की चिता पर सती हो जाये। साधारणतया वह सती होना पसंद करती थी।[12] बड़े–बड़े मंदिरों में देवदासी प्रथा प्रचलित थी। देश के अधिकांश भागों के बड़े मंदिरों में सुंदर–सुंदर कन्याओं को रखा जाता था और उनसे नृत्य करवाया जाता था।

साधारणतया हिन्दू लोग शाकाहारी थे। सामिष भोजन वर्जित नहीं था; लेकिन ब्राह्मण और वैश्य जाति की स्त्रियों के लिये मद्यपान निषेध था। श्रीवास्तव के मतानुसार अस्पृश्यता और दास प्रथा हिन्दू समाज के दो कुरूप अंग थे। चांडालों से बात करना, उनके साथ यात्रा करना, कुएं या पोखरें से पानी भरना, चांडाल के पात्र से पानी पीना, उसके हाथ का भोज ग्रहण करना या कुछ समय तक उसके साथ एक ही आवास में रहना आदि सभी अपत्रि कार्य समझे जाते थे और ब्राह्मणों को तरह–तरह के प्रायश्चित करने पड़ते थे।[13] दिल्ली सल्तनत काल में हिन्दुओं की जिस भिन्न–भिन्न स्थिति का वर्णन मिलता है, उसके लिये तत्कालीन धर्मांध मुस्लिम दरबारी लेखकों की कलम का भी कम योगदान नहीं है। उन्होंने वास्तविक स्थिति को स्पष्ट करने के स्थान पर अधिकतर अपनी निजी भावनाओं को उजागर करने में उत्साह दिखाया है। हसन निजामी इस बात में पुर्ण आस्था व्यक्त करता है कि अधर्मियों का नाश करके एक शुद्ध इस्लामी राज्य की स्थापना की जाये।[14] इन लेखकों के अनुसार दिल्ली सल्तनत काल के सभी सुल्तान अच्छे शासक थे, क्योंकि उनका प्रमुख उदेश्य इस्लाम के प्रचार के लिए निरंतर युद्ध करना था। जबकि यह विडम्बना है कि मुईजुद्दीन के भारत में प्रवेश करने पर उसका प्रथम युद्ध किसी हिन्दू शासक से न होकर मुस्लिम शासक से हुआ था।[15]

जियाउद्दीन बरनी एक ऐसा लेखक था, जो हिन्दुओं के विरूद्ध पूर्ण जिहाद का समर्थक था। उसके अनुसार हिन्दुस्तान में इस्लाम की तब तक सम्मान व सर्वोच्चता स्थापित नहीं हो सकती, जब तक मुस्लिम शासक, साहस एकत्रित करके अधर्मियों का नाश कर उन्हें नीचा न दिखा दें।[16] बरनी असहिष्णु एवं कट्टर था। उसके अपने विचार संकीर्ण व बंधे हुये थे। संभवतः इन्हीं लेखकों की बहुसंख्यक जनता के प्रति घृणा की भावना ने कुछ आधुनिक लेखकों को भी प्रभावित किया। श्रीवास्तव के अनुसार सल्तनत काल में लाखों हिन्दू मारे गये तथा लाखों स्त्री, पुरूष गुलाम बनाये गये। इससे पुर्व इतिहास ऐसे उदाहरण प्राप्त नहीं होते है। इस युग में हिन्दू जनता को राजनैतिक व सामाजिक दृष्टि से बहुत दुख उठाने पड़े। विजेताओं ने उन्हें जो राजनीतिक अथवा आर्थिक कष्ट पहुंचाये। उन्हें इन संकटों से इतना दुःख और वेदना नहीं हुई, जितनी कि असम्मानजनक व्यवहार, धार्मिक अत्याचारों और पारिवारिक सम्मान पर आघात के कारण हुई। तुर्की शासन अत्याचार पूर्ण था। प्रकृति के कोप के कारण जब जनता के सिर पर कोई विपति टुटती थी, तो हिन्दू लोग वेदना से चिल्लाने लगते थे 'ईश्वर और तुर्क दोनों हमारे पीछे पड़ गये है।[17]

इसके विपरीत कुछ लेखकों की यह धारणा है कि तुर्की शासन के अंतर्गत हिन्दुओं की दशा अच्छी थी। तुर्की के आगमन के पश्चात् भारत में राजनैतिक अव्यवस्था और अराजकता की स्थिति समाप्त हुयी तथा देश में सशक्त तथा दृढ़ प्रशासन की स्थापना से शांति व सुरक्षा का वातावरण तैयार हुआ, जिससे बहुसंख्यक हिन्दुओं को लाभ पहुंचा। आई0एच0 कुरैशी ने तो यहां तक लिखा है कि सल्तनत युग में हिन्दुओं की दशा देशी राजाओं के शासन से कहीं अधिक अच्छी थी। इन पर वित्तीय भार पूर्व–मुस्लिम युग से कम था तथा वे किसी विशेष सामाजिक असमानता के शिकार नहीं थे।[18] रसीद ने लिखा है कि फतवा–ए–फिरोजशाही में जिम्मियों की स्थिति के बारे में जो निर्देश दिये गये है उससे भी स्पष्ट होता है कि हिन्दुओं की दशा निम्न कोटि की नहीं थी तथा वे अपनी जन्मभूमि में नागरिक अधिकार से वंचित नहीं थे।

निष्कर्ष: उपर्युक्त धारणओं का अध्ययन करने के बाद इस बात में तो कोई संदेह नहीं रहता है कि सल्तनत काल में हिन्दुओं की स्थिति में पहले से अंतर आ गया था तथा उनकी दशा सोचनीय थी। सल्तनत काल में लाखों हिन्दू मारे गये तथा लाखों स्त्री, पुरूष गुलाम बनाये गये। परंतु एक बात अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि धार्मिक कट्टरता संबंधी सभी बातें एक ही समय में विद्यमान नहीं थी। के0एस0 लाल ने हिन्दुओं की स्थिति के लिए तीन कारणों को उत्तरदायी माना है–प्रथम मुस्लमानों द्वारा भारत विजय की विशेष प्रकृति; द्वितीय विजेता और पराजित की स्वभाविक कट्टरता तथा तृतीय गैर मुस्लमानी देश में लागु किये जाने वाले मुस्लिम कानुन की प्रकृति[19] सल्तनत काल के अध्ययन से पता चलता है कि धर्मांध मुस्लिम शासकों हिन्दुओं को मुस्लमान बनाने दमन और विजय का सहारा लिया। साथ ही साथ हिन्दू स्त्रियों से जबरदस्ती विवाह कर मुस्लमान बनाने का प्रयास किया, जिसके कारण बाल–विवाह, पर्दा प्रथा और सती प्रथा जैसे कुरितियॉ तेजी से बढ़ने लगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. मजूमदार, आर0सी0 – स्ट्रगल फॉर एम्पायर, पृ0सं0–477
2. पंडित, कुमार शिव – मध्यकालीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, पृ0सं0–18
3. श्रीवास्तव, ए0एल0 – दिल्ली सल्तनत, पृ0सं0–57
4. – – वही
5. हबीबुल्लाह – फाउण्डेशन ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया, पृ0सं0– 297
6. श्रीवास्तव, ए0एल0 – भारत का इतिहास, पृ0सं0–269
7. श्रीवास्तव, ए0एल0 – भारत का इतिहास, पृ0सं0–268–69
8. श्रीवास्तव, ए0एल0 – मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृ0सं0–28
9. श्रीवास्तव, ए0एल0 – भारत का इतिहास, पृ0सं0–269
10. श्रीवास्तव, ए0एल0 – मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृ0सं0–20
11. वाहिद, मिर्जा – दिल्ली सल्तनत, पृ0सं0–609
12. रशीद,ए0 – सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इंडिया, पृ0सं0–144
13. श्रीवास्तव, ए0एल0 – मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृ0सं0–22–23
14. हसन, निजामी – पी0यू0जे0, पृ0सं0–58
15. रशीद,ए – सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इंडिया पृ0सं0 –18–20
16. हबीब, मो0 – पोलिटिकल थ्योरी ऑफ दि देलही सल्तनत, पृ0सं0–139
17. – – भारत का इतिहास, पृ0सं0–269
18. कुरैशी, आई0एच0 – एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ सल्तनत ऑफ देलही, पृ0सं0–162–63
19. लाल, के0एस0 – स्टडीज इन मेडिवल इंडिया हिस्ट्री, पृ0सं0–209